पश्चिमी उत्तरप्रदेश के

जलाशय

ऐतिहासिक विरासत

हरिशंकर शर्मा

जनहित फाउंडेशन

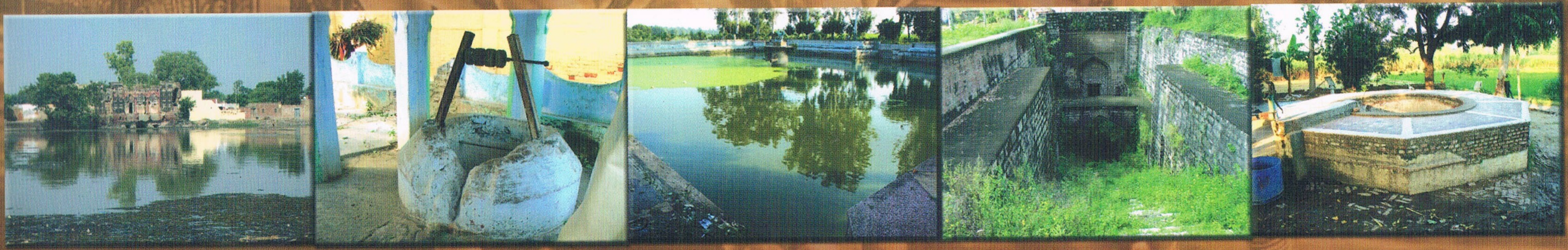

पश्चिमी उत्तरप्रदेश के जलाशय: ऐतिहासिक विरासत

हरिशंकर शर्मा

जनहित फाउंडेशन

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जलाशयः ऐतिहासिक विरासत

लेखक : हरिशंकर शर्मा

छायाकार : विश्वमोहन नौटियाल

© जनहित फाउंडेशन, मेरठ

प्रथम संस्करण : नवम्बर, 2007

प्रकाशन :
जनहित फाउंडेशन
डी-80, शास्त्रीनगर, मेरठ (उ० प्र०)
फोन : 0121-2763418, 4004123 ई-मेल : janhitfoundation@gmail.com वेबसाइट : www.janhitfoundation.in

मुद्रण :
सिस्टम्स विज़न
ए-199, ओखला फेज़-1, नई दिल्ली-110020 systemsvision@gmail.com

इस पुस्तक के प्रकाशनार्थ रॉयल नीदरलैण्ड्स दूतावास, नई दिल्ली द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की गई है।

नोट : इस पुस्तक की सामग्री का किसी भी रूप में उपयोग किया जा सकता है, स्रोत का उल्लेख करेंगे तो अच्छा लगेगा।

विषय सूची

प्रस्तावना

कठिन तपों से प्रकट हुआ जल

तालाब विज्ञान और वैज्ञानिक

मेरठ जनपद के तालाब

सूरज कुण्ड 7
पिलोखड़ी का तालाब 9
लुप्त नवचण्डी ताल 11
एक लुप्त सरोवर - शहीद स्मारक 13
श्रीराम ताल 13
पक्का तालाब 14
दुर्वासा ताल 16
गांधारी तालाब 17
केशिकी अथवा कौशिकी तालाब 19
श्यामा ताल 20
जरत्कारू ऋषि का तालाब 21
नवल देह का कुआं (अमृत कूप) 22
परीक्षितगढ़ के कुएं 24
जाटों वाला तालाब 24
बूढ़ी गंगा झील 25
नील का कुआं 26
पाण्डवों का कुआं 27
किठौर के तालाब 28
शाहजहांपुर का तालाब 30
नंगली तीर्थ (ताल) 31
गंगोल तीर्थ (तालाब) 32
सेठों का तालाब 33
प्राकृतिक झील 34
करनावल का तालाब 35

मुजफ्फरनगर जनपद के तालाब

मोती झील 39
कुटी तालाब 40
हनुमान टीला (तालाब) 41
कैराना के तालाब 42
नहर वाला या नवाबों का तालाब 43
देवी मन्दिर वाला तालाब 44
कांधला के तालाब 44

अपनी बात

जनहित फाउंडेशन द्वारा वर्ष २००३ में मेरठ जनपद के समस्त ६६३ गावों में तालाबों व कुओं का भौतिक सत्यापन एक अध्ययन के रूप में किया गया था। उस समय जनहित फाउंडेशन के कार्यकर्ताओं को कई ऐतिहासिक जलाशय देखने को मिले थे। उनमें से अधिकतर आज दम तोड़ते नज़र आ रहे थे व ऐसा महसूस किया गया मानों वे टक-टकी लगाकर अपने जीर्णोद्धार की प्रतीक्षा कर रहे हों। मैनें तभी यह प्रतिज्ञा ली थी कि न केवल मेरठ बल्कि आस-पास के जनपदों में भी जाकर हम अपनी जलसंरक्षण की ऐतिहासिक व सांस्कृतिक विरासत के शानदार इतिहास को कागजों में समेटेंगे। मात्र प्रस्तुत पुस्तक के रूप में इन्हें आप तक पहुंचाना ही हमारा लक्ष्य नहीं है। असली काम है कि इतनी अधिक ऐतिहासिक महत्व की जलसंरचनाओं को सरकार तक पहुंचाए व दवाब बनायें कि इन्हें जिंदा कर व इनका सौंदर्यीकरण कर ऐसी स्थिति में लायें कि ये मानव समाज की आने वाली कई पीढ़ियों तक प्यास बुझाने का कार्य करें। संस्था का यह भी प्रयास होगा कि इन ऐतिहासिक तालाबों व कुओं की सशक्त ऐतिहासिक यात्रा व उनकी सेवा से स्थानीय समाज को भी अवगत करायें। इस पुस्तक का लाभ तभी होगा जब मेरठ या मुजफ्फरनगर का स्थानीय समाज अपने स्वर्णिम अतीत को पहचानकर इन जलाशयों की रक्षार्थ जिम्मेदारी अपने कन्धों पर लेगा- चाहे वह ग्राम प्रधान हो या फिर जिला पंचायत का सदस्य, मेयर या विधायक हो या फिर सांसद। इन जनप्रतिनिधियों पर बहुत बड़ी जिम्मेवारी है इन जलाशयों को बचाने की, जीर्णोद्धार की व उनके सौन्दर्यीकरण की।

क्या हमने कभी सोचा है कि आखिर क्यूं ये तालाब व कुएं बनाये गये? फिर एक बार बनाने के बाद इन्हें जिन्दा रखने के लिए किसी खास मेहनत-मशक्कत की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है। ये तो लगभग निःशुल्क ही मानव समाज की सेवा करते रहते हैं। अपने पूर्वजों की इस सूझबूझ भरी जल सम्पति को हम यूं ही न बरबाद करें। आवश्यकता है कि अपने समाज को इनकी ऐतिहासिक महत्ता से परिचित कराएं। पश्चिमी उत्तरप्रदेश के समाजशास्त्र को समझाने में इन ऐतिहासिक जलस्रोतों का भी अहम् योगदान है। इस दिलचस्प एवं महत्वपूर्ण जानकारी को आप तक पहुंचाने का मेरा निश्चय प्रस्तुत पुस्तक के रूप में पूरा हुआ।

सर्वप्रथम मैं रॉयल नीदरलैण्ड्स दूतावास के सांस्कृतिक विभाग का आभारी हूं जिसने जनहित फाउंडेशन को यह महत्वपूर्ण कार्य करने हेतु आर्थिक सहयोग प्रदान किया। भाई हरिशंकर शर्मा, रमन त्यागी व विश्वमोहन नौटियाल का मैं विशेष रूप से आभारी हूं जिन्होंने एक खोजी दल के रूप में गांव-गांव, कस्बों व शहरों में घूम-घूमकर शोधस्तरीय सामग्री एवं चित्र जुटाए।

अन्त में मैं आप सभी पाठकों से अनुरोध करूंगा कि पश्चिमी उत्तरप्रदेश की इस ऐतिहासिक जल विरासत के विषय में देश भर में जन-जन तक पहुंचायें व इन्हें बचाने में जनहित फाउंडेशन को सक्रिय सहयोग दें। आखिर तालाब पर यदि सबका साझा हक है तो इनको दुरुस्त रखने की सबकी साझी जिम्मेदारी भी तो है।

अनिल राणा
निदेशक
जनहित फाउंडेशन

प्रस्तावना

जो लोग जल संरक्षण पर कार्य कर रहे हैं वे वास्तव में धन्यवाद के पात्र हैं। ऐसे मानव समूह को जल बिरादरी नाम दिया गया है। इन्हें कलियुगी भगीरथ कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा। यदि मेरठ क्षेत्र की बात की जाये तो मैग्सेसे पुरस्कार प्राप्त राजेन्द्र सिंह तथा जनहित फाउंडेशन के निदेशक अनिल राणा जिस प्रकार अपने सहयोगियों के साथ जल संरक्षण को समर्पित हैं वह देश, मानवता एवं जल बिरादरी के लिए गौरव का विषय है। इन्हें 'जल पुरुष' कहना सार्थक ही होगा।

नदियों के दूर-दूर होने के कारण प्राचीन काल में प्राकृतिक या मानव निर्मित तालाब ही जल का मुख्य स्रोत होते थे। कुओं का आविष्कार भी बाद में हुआ। ये तालाब जल ही नहीं बल्कि सामाजिक एकरूपता, समरसता, ग्राम्य विकास एवं आर्थिक संसाधनों का आधार भी होते थे। जैसे-जैसे इनकी उपयोगिता घटती गई वैसे-वैसे सामाजिक प्रेम-भाव-एकता भी बिखरती चली गई। पहले सारा गांव पानी के लिए एक तालाब पर इकट्ठा होता था तो अपने सुख-दुख की बातें भी कर लेता था। धीरे-धीरे एक तालाब का स्थान कई-कई तालाब और फिर कुएं लेने लगे तो गांव की एकता व समरसता भी छिटकने लगी।

ग्रामीण गरीबों ने निज श्रम से कच्चे तालाब-कुएं बनाये तो राजा-महाराजा एवं सेठ ज़मींदारों ने स्वर्ग कामना हेतु पक्के एवं सुन्दर तालाबों एवं मन्दिरों का निर्माण कराया। लेकिन लोक कल्याण की कामना, यश प्रतिष्ठा एवं अभिमान से दूर रहने के लिए उन्होंने अपने नाम को गुप्त ही रखा अर्थात् उन पर अपने नाम का शिलालेख आदि नहीं लगवाया। उनके लिए तो यह महत्वपूर्ण था लेकिन इतिहास का लोप हो जाने के कारण बाद की पीढ़ियों के लिए यह अज्ञान कष्टदायक सिद्ध हुआ।

हमारे सर्वाधिक समीप आज महाभारत काल है इसलिए खोज करने पर उस काल के ऐतिहासिक प्रमाण ही प्राप्त हो पाते हैं, वह भी पुराणों-शास्त्रों के अलंकारिक कहानी किस्सों के रूप में। इसलिए वैश्विक ऐतिहासिक बिरादरी या वैज्ञानिक उनको अत्यधिक महत्वपूर्ण नहीं मानते। अर्थात् इनका काल एवं संस्थापक सिद्ध करने के लिए हमारे पास तर्कसंगत प्रमाण तो हैं लेकिन अकाट्य नहीं।

अनिल राणा ने जब मेरे सम्मुख तालाबों के ऐतिहासिक स्वरूप पर यह पुस्तक लिखने का प्रस्ताव रखा तो एक बार तो मैं सकते में आ गया, मेरे सामने धर्म संकट उत्पन्न हो गया। परन्तु मैंने जीवन में चुनौतियों को स्वीकार करना सीखा है इसलिए मैंने इस चुनौतीपूर्ण कार्य को भी सहर्ष स्वीकार किया। अभी तक इस विाय पर छोटी-बड़ी कैसी भी पुस्तक या सामग्री उपलब्ध नहीं है। गजेटियर्स में तो तालाबों को छुआ तक नहीं गया है। ऐसे में गांव-गांव जाकर तालाब और उनका इतिहास खोजना कठिन और दुस्साध्य कार्य बन गया।

सूरज कुण्ड 45
पक्का तालाब 45
अंडोसर मन्दिर एवं कुएं 46
मनकामेश्वर मन्दिर 47
बनी वाला तालाब 47
कांच का तालाब 49
ज्ञानेश्वर ताल एवं शिव मन्दिर 50
चार दीवाली वाला कुआं 50
बाय वाला कुआं 52
हास-कुण्ड 54
टन्ढेड़ा के तालाब 55
मीरापुर के तालाब 56
भंराई वाला तालाब एवं बबरे वाली 59
खान वाला तालाब 60
कच्चा-पक्का तालाब 60
जामुन वाली 61
सतियों वाला तालाब 61

गाजियाबाद जनपद के तालाब

जैत सिंह का तालाब 61
शेखपुरा का तालाब 63
श्री दूधेश्वर महादेव मन्दिर एवं सरोवर 66
रमते राम का पक्का तालाब 67
कुत्ते का तालाब 68
नृग का (नक्का) कुआं 70
डासना मसूरी की प्राकृतिक झील 71
हसनपुर की प्राकृतिक झील 72
एक कुआं दो पानी जारचा 72
सिद्ध बाबा कौड़िया तालाब 74
बनजारा कुआं 75

बागपत जनपद के तालाब

सेठों का तालाब 78
राम ताल 78
हिण्डन झील एवं बाल्मीकि आश्रम 80

यदि हम सदुपयोग करें तो ईश्वर प्रदत्त साधन अविनाशी हो सकते हैं। लेकिन क्या हम सब मिलकर ऐसा करेंगे? प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग संरक्षण एवं विनाश के संदर्भ में तीन वैश्विक प्रवृत्तियां हमारे समक्ष हैं :

1. जो उपयोग से अधिक संरक्षण पर ध्यान देती हैं।
2. जो उपयोग तो करती है लेकिन उसके समाप्त होने से पूर्व संरक्षण के प्रति सचेत होकर युद्ध स्तर पर उसमें जुट जाती है।
3. जो उपयोग तो विनाशक स्तर तक करती है लेकिन संरक्षण बिल्कुल नहीं करती।

इनमें तीसरी संस्कृति महाभयानक एवं विनाशक है। न तो उसे समाज की चिन्ता है और न ही आगामी पीढ़ियों के भविष्य की। उनके अनुसार ऊपर वाले ने जो कुछ बनाया है वह सब भोगने के लिए इंसान स्वतंत्र है। संरक्षण की आवश्यकता ही नहीं है, उसे इतना भोगो कि आगे के लिए कुछ शेष ही न रहे। इस संस्कृति के वाहकों का मानना है कि ऊपर वाले ने उन्हें पृथ्वी का शासक बना कर भेजा है इसलिए उन्हें यह अधिकार भी दिया है कि वह किसी भी वस्तु को किसी भी प्रकार और किसी भी हद तक भोगें। इसलिए वे समस्त सामाजिक, उपकारिक, मानवतापूर्ण एवं संरक्षणपूर्ण कार्यों से विरक्त हैं। उनकी यह सोच समस्त प्राणियों के लिए कष्टकारक सिद्ध हो रही है। तालाब भी इसके अपवाद नहीं हैं। सत्ता लोभी सरकार पंगु बनी बैठी है तो प्रशासन लचर। कमेलों से पशुओं के खून और गंदे मांस एवं खतरनाक रसायनयुक्त पानी को सीधे पृथ्वी में उतार कर भूगर्भीय पानी तक को दूषित किया जा रहा है। अनेक बार प्रमाणित करने के पश्चात् भी सरकार चुप है। कहां से आयेगा भविष्य में शुद्ध पानी? क्या बिसलेरी की बोतलें ही बन जायेंगी वरुण देव के देश की नियति? एक अमेरिकी शोध के अनुसार प्लास्टिक की बोतलों का पानी अत्यधिक हानिकारक सिद्ध हो चुका है। फिर किसका पानी पियोगे? क्या जल भी आयात किया जायेगा? क्या गरीबों की नियति नाली का ही पानी पीने की बन जायेगी?

यद्यपि जल संरक्षण का कार्य समस्त वैश्विक बिरादरी का है परन्तु इसके लिए हम भारतीयों को विशेष श्रम करना पड़ेगा। भारतीय संस्कृति ने अपने जन्मकाल से ही मानव कल्याण की भावना को सर्वोपरि रखा है। न उसने पूर्व में कोई भेदभाव किया है और न ही भविष्य में करेगी। कण-कण में भगवान के दर्शन करने वाली, प्रस्तर प्रतिमाओं को भगवान के रूप में पूजने वाली संस्कृति जीवित भगवानों (मानव व जीव-जन्तुओं) की अवहेलना कैसे कर सकती है? इसलिए यह दुष्कर कार्य हमें ही करना है।

हरिशंकर शर्मा

कठिन तपों से प्रकट हुआ जल

पृथ्वी पर सभ्यताओं के क्रमिक विकास से विनाश तक की प्रक्रिया अनवरत रूप से गतिशील है। न जाने कितनी सभ्यताएं काल के गाल में समा चुकी हैं। प्रत्येक काल में बहुत कुछ नष्ट हुआ है तो कुछ नवीन सृजन भी हुआ है। शास्त्रों में ऐसे कई आख्यान मिलते हैं जिनमें पीने के पानी का अभाव लक्षित होता है। पृथ्वी गाय के रूप में महाराजा पृथु से कहती हैः

समां च कुरु मां राजन्देववृष्टं यथा पयः।
अपवर्तावपि भद्रं ते उपावर्तेत मे विभो।।

श्रीमद्भागवत चतुर्थ स्कन्ध अष्टम अध्याय श्लोक 11

अर्थात् "हे राजन एक बात और है, आपको मुझे समतल करना होगा, जिससे कि वर्षा ऋतु बीत जाने पर भी मेरे ऊपर इन्द्र का बरसाया हुआ जल सर्वत्र बना रहे - मेरे अन्दर की आर्द्रता सूखने न पावे। यह आपके लिए बहुत मंगल कारक होगा।"

इसका तात्पर्य है कि उस समय वर्षा का पानी बह कर समुद्र में चला जाता था और पृथ्वी पर पीने के पानी का सर्वथा अभाव था। पृथ्वी की आर्द्रता भी समाप्त हो चुकी थी तब पृथु ने पृथ्वी को समतल करा कर पानी रोकने की व्यवस्था की।

ऐसा ही एक अवसर राजा सगर के सामने उपस्थित होता है। गंगावतरण की अलंकारिक गाथा सब जानते हैं कि भगीरथ ने अपने 60,000 पुरखों के उद्धार के लिए कठिन तप के द्वारा गंगा को पृथ्वी पर उतारा। शास्त्रों की इस अलंकारिक गाथा का अभिप्राय भी जल की खोज से है। कैसे? राजा सगर के 60,000 पुत्र (पुत्रवत सैनिक या प्रजा) महत्वपूर्ण अश्वमेध यज्ञ के लुप्त अश्व की भांति पानी को खोजते-खोजते (कथा में पृथ्वी को खोदते-खोदते) समुद्र के किनारे कपिल मुनि के आश्रम पर पहुंचते हैं और वहां पीने योग्य पानी का विशाल भण्डार देख कर मुनि पर क्रोधित होते हैं तथा प्यास बुझाने के लिए पानी की मांग करते हैं। परन्तु उनके दुर्व्यवहार से कुपित मुनि उन्हें पीने के लिए पानी नहीं देते। फलस्वरूप पानी के अभाव में वे सब मुनि की क्रोधाग्नि (पानी न देने) के कारण मर जाते हैं। कपिल मुनि यह भी जानते थे कि पानी के सर्वाधिक स्रोत स्वर्ग (स्वर्ग जैसे ऊंचे एवं सुन्दर स्थान हिमालय) में स्थित हैं और वे उन्हें पृथ्वी पर लाने की विधि (तकनीक) भी जानते थे। इसलिए उन्होंने गंगा (जल का अक्षय स्रोत) को पृथ्वी पर लाने को ही अंतिम विकल्प के रूप में देखा।

राजा सगर का पुत्र असमंजस कपिल मुनि से पानी प्राप्त करने एवं अपने भाईयों की आत्मा शान्ति के लिए उपाय पूछता है तो मुनि उसे पृथ्वी पर गंगा (जल) लाने का परामर्श देते हुए बताते हैं कि जब उसके 60,000 भाईयों द्वारा अधूरे छोड़े गये कार्य (पानी उत्पन्न करना) को पूरा करोगे, उन्हें गंगा जल में स्नान कराओगे तभी उनकी आत्मा को शान्ति मिलेगी। असमंजस, उसका पुत्र अंशुमान, तत्पुत्र दिलीप आदि जीवन भर कठोर तप (प्रयत्न) करने के पश्चात् भी गंगा को पृथ्वी पर नहीं ला सके।

अन्त में दिलीप का पुत्र भगीरथ इस कार्य में सफलता प्राप्त कर अपने पितरों (एवं देश) का उद्धार करता है, अर्थात् पृथ्वी पर जल एवं उसके संसाधनों की वृद्धि करता है। यदि शास्त्रों के इस आख्यान को जस का तस भी मान लिया जाये तो भी जल का महत्व कम नहीं होता। गंगा आज भी मानव मात्र का उद्धार कर रही है।

श्रीमद्भागवत के नवम् स्कन्ध के नवम् अध्याय में गंगावतरण का अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया गया है।

शास्त्रों की इस बात को विज्ञान भी सिद्ध कर चुका है कि किसी समय समस्त पृथ्वी एक ही थी (एक भू-भाग था) आज की भांति पृथक-पृथक टुकड़ों में नहीं बंटी थी। तब हिमालय जैसे अनेक पर्वत भी नहीं थे। बाद में भूगर्भीय परिवर्तनों से पृथ्वी पृथक-पृथक भागों में बंटी और उससे हिमालय एवं ग्लेशियरों का निर्माण हुआ। जरा कल्पना कीजिये कि हिमालय और ग्लेशियरविहीन पृथ्वी पर पानी की क्या स्थिति रही होगी? अब हम पानी को नष्ट करने में लगे हैं। क्या होगा भविष्य? क्या पुनः भूत में चले जायेंगे?

यदि हम सदुपयोग करें तो ईश्वर प्रदत्त साधन अविनाशी हो सकते हैं। लेकिन क्या हम सब मिलकर ऐसा करेंगे? प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग संरक्षण एवं विनाश के संदर्भ में तीन वैश्विक प्रवृत्तियां हमारे समक्ष हैं :

1. जो उपयोग से अधिक संरक्षण पर ध्यान देती हैं।
2. जो उपयोग तो करती है लेकिन उसके समाप्त होने से पूर्व संरक्षण के प्रति सचेत होकर युद्ध स्तर पर उसमें जुट जाती है।
3. जो उपयोग तो विनाशक स्तर तक करती है लेकिन संरक्षण बिल्कुल नहीं करती।

इनमें तीसरी संस्कृति महाभयानक एवं विनाशक है। न तो उसे समाज की चिन्ता है और न ही आगामी पीढ़ियों के भविष्य की। उनके अनुसार ऊपर वाले ने जो कुछ बनाया है वह सब भोगने के लिए इंसान स्वतंत्र है। संरक्षण की आवश्यकता ही नहीं है, उसे इतना भोगो कि आगे के लिए कुछ शेष ही न रहे। इस संस्कृति के वाहकों का मानना है कि ऊपर वाले ने उन्हें पृथ्वी का शासक बना कर भेजा है इसलिए उन्हें यह अधिकार भी दिया है कि वह किसी भी वस्तु को किसी भी प्रकार और किसी भी हद तक भोगें। इसलिए वे समस्त सामाजिक, उपकारिक, मानवतापूर्ण एवं संरक्षणपूर्ण कार्यों से विरक्त हैं। उनकी यह सोच समस्त प्राणियों के लिए कष्टकारक सिद्ध हो रही है। तालाब भी इसके अपवाद नहीं हैं। सत्ता लोभी सरकार पंगु बनी बैठी है तो प्रशासन लचर। कमेलों से पशुओं के खून और गंदे मांस एवं खतरनाक रसायनयुक्त पानी को सीधे पृथ्वी में उतार कर भूगर्भीय पानी तक को दूषित किया जा रहा है। अनेक बार प्रमाणित करने के पश्चात् भी सरकार चुप है। कहां से आयेगा भविष्य में शुद्ध पानी? क्या बिसलेरी की बोतलें ही बन जायेंगी वरुण देव के देश की नियति? एक अमेरिकी शोध के अनुसार प्लास्टिक की बोतलों का पानी अत्यधिक हानिकारक सिद्ध हो चुका है। फिर किसका पानी पियोगे? क्या जल भी आयात किया जायेगा? क्या गरीबों की नियति नाली का ही पानी पीने की बन जायेगी?

यद्यपि जल संरक्षण का कार्य समस्त वैश्विक बिरादरी का है परन्तु इसके लिए हम भारतीयों को विशेष श्रम करना पड़ेगा। भारतीय संस्कृति ने अपने जन्मकाल से ही मानव कल्याण की भावना को सर्वोपरि रखा है। न उसने पूर्व में कोई भेदभाव किया है और न ही भविष्य में करेगी। कण-कण में भगवान के दर्शन करने वाली, प्रस्तर प्रतिमाओं को भगवान के रूप में पूजने वाली संस्कृति जीवित भगवानों (मानव व जीव-जन्तुओं) की अवहेलना कैसे कर सकती है? इसलिए यह दुष्कर कार्य हमें ही करना है।

हरिशंकर शर्मा

तालाब विज्ञान और वैज्ञानिक

वैसे ही

नहीं बन गये लाखों तालाब। इनका भी एक विज्ञान है तो सैंकड़ों वैज्ञानिक भी। मुहूर्त ज्योतिषी बतायेगा तो स्थापना या प्राणप्रतिष्ठा में वैदिक मंत्रों का उच्चारण पण्डित करेगा। आगौर (पानी आने का स्थान) एवं तालाब की भूमि का चयन 'गजधर' मिलने वाले पानी की मात्रा एवं गुणों के आधार पर करेगा। वह निकलने वाली मिट्टी की मात्रा, खोदने वालों की संख्या एवं औजारों के विषय में भी बतायेगा। मटकूट या मटकूड़ा मिट्टी का विश्लेषण करेगा। तालाब के स्थान का चुनाव 'बुजई' करेगा तो गजधर का साथ 'जोड़िया' देगा। पाल या पुश्ता बनाने वाले इसका निर्णय करेंगे तो 'चुनकर' ईंट-चूने का काम करेंगे। पाल के भीतरी भाग में पत्थर लगाने हैं तो बुलाओ 'सिलावटों' को। भूमि में पानी की स्थिति का ठीक ज्ञान नहीं हो रहा तो 'सिरभाव' दूर से ही ठीक-ठीक बता देंगे। बांध कहां बंधेगा? पानी का दबाव कितना होगा? तालाब का पानी कहां तक जायेगा, आदि को भील अपने तीर से ही रेखा खींच कर बता देते। तालाब के पानी पर विवाद न हो इसलिए 'नीरघण्टी' (जाति से हरिजन या कोई गरीब पिछड़ा) की बात बड़े से बड़ा जमींदार भी मानने को बाध्य। तालाब को कोई गंदा न करे, पशु आदि न आयें इसलिए 'पट्टी' पद है। तालाबों को नष्ट होने से 'गैंगजी' रोकेंगे। तालाब गहरा बना रहे इसलिए मिट्टी (तलछट) निकालने के उत्सव का प्रारम्भ मिट्टी निकाल कर राजा एवं उसके सहायक स्वयं करेंगे। इस कार्य के लिए कहीं औड़िया नियुक्त हुए तो कहीं धर्मादा प्रथा बनाई गई।

पाल पर पानी का दबाव न पड़े इसलिए बनाओ 'निष्टा या कोहनी'। आगौर से पानी छान कर लाने के लिए 'खुर्रा' बनता तो पाल को मजबूत करने की क्रिया (पत्थर लगा कर) जुहाना कहलाती। एकदम पक्की पाल को 'पठियाल' कहते। कहीं-कहीं इस पर मन्दिर आदि का निर्माण भी किया जाता। तालाब की दीवारों को खिसकने से रोकने वाले निर्माण (बुर्जी, छोटे चबूतरे आदि) को हथिनी कहते। किसी हथिनी में पानी की स्थिति बताने के लिए काल्पनिक घटोइया देवता या बाबा की स्थापना की जाती। जल मापने के लिए नागयष्टि या स्तम्भ बनाया जाता-कहीं पत्थर का तो कहीं लकड़ी का। पैमाने के रूप में शंख नाग आदि शुभ चिन्ह बनाये जाते। बड़े तालाबों की पालों की दृढ़ता के लिए बीच में टापू बनाकर उस पर समाधि-छतरी आदि बनाई जाती। स्थान के अनुसार वृक्ष भी लगाये जाते। तालाब से पानी निकालने के मुहाने पर 'डाट' की व्यवस्था होती तो सिंचाई व्यवस्था को सारणी या प्रणाली कहते। आगौर को कोई गंदा न करे इसलिए वहां 'थम्भ' बनाया जाता। सूरज पानी की चोरी कम से कम करे इसलिए तालाब का ढाल एक ओर या बीच में बनाया जाता। यहां भी तालाब बन गया, चलो आगे बनायेंगे, इस काम को रामनामी चादर ओढ़ कर शरीर पर रामनाम गोदवाने वाले रामनामी बणजारे करते। घूमना और तालाब बनाना, बस यही एक धुन।

लाडिया, दुसाध, नौनियां, गोंड, परधान, कोल, ढीमर, भेल, सहरिया, नायक, गरासिया, ओढ़िया तथा पट्टी आदि नामों की एक लम्बी शृंखला है तालाब वैज्ञानिकों की। भिन्न-भिन्न स्थानों पर इनके नाम तो बदले लेकिन काम नहीं। इन्होंने जल-तालाब विज्ञान किसी विश्वविद्यालय की वातानुकूलित प्रयोगशाला में नहीं सीखा, परन्तु ज्ञान, बड़े-बड़े वैज्ञानिकों को मात दे दे। इन्होंने यह उच्च तकनीक प्रकृति की छांव तले, धरती मां की गोद में बैठ कर, अपने अनुभवी बुजुर्गों से सीखी।

तकनीकी आधार पर तालाबों के नाम भी पृथक-पृथक होते। जैसे सरोवर, सागर, जोहड़, जोहड़ी, बंध, बंधिया, पोखर, डिग्गी, कुण्ड, हौज, चौपरा, अठघट्टी, आत्तरिया, पिपराहा, लखपेड़ा, लखरावां, गुचकुलिया, पल्वल, दशफला पद्धति, भूफोड़ तथा हाथी ताल आदि।

तालाब की प्रतिष्ठा पर वैदिक स्वर लहरियां गूंजती, लोकगीत व भजन गाये जाते, खाना-पीना चलता तो तालाब में जलीय जन्तु (कहीं-कहीं तो स्वर्णाभूषण पहना कर) एवं वनस्पतियां छोड़ी जातीं। तालाब निर्माण का कार्य केवल आवश्यकता ही नहीं था परन्तु धर्म-सुभाव (स्वभाव) होता था। कहीं मानवीय कार्य तो कहीं तालाबों के द्वारा मोक्ष की कामना, अर्थात् ज्ञान-विज्ञान अथवा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष एक साथ।

मेरठ जनपद के तालाब

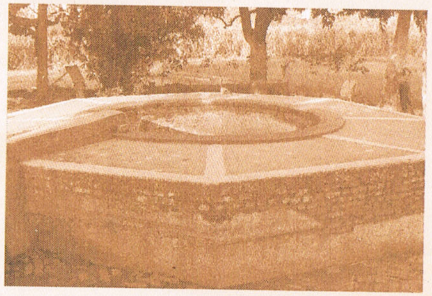

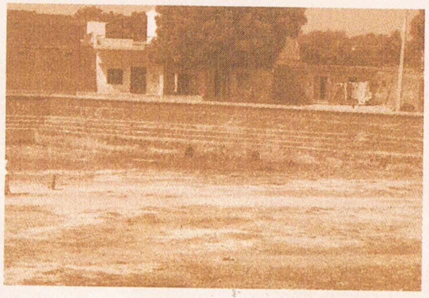
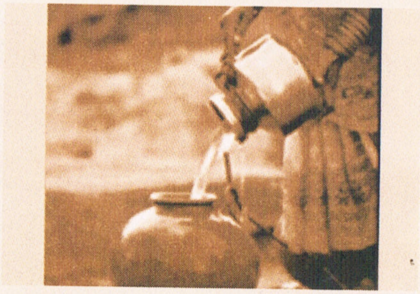

सूरज कुण्ड

सूरज कुण्ड मेरठ का अत्यधिक प्रसिद्ध एवं महत्वपूर्ण तालाब था। यद्यपि अब यह पूर्ण रूप से सूख चुका है परन्तु इसका गौरवशाली अतीत आज सोचने को विवश करता है कि हम विकास की ओर जा रहे हैं या विनाश की ओर। सूरज कुण्ड के इतिहास को हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं:

1. प्रारम्भिक अथवा रामायणकालीन्
2. मध्य अथवा महाभारतकालीन्
3. अंग्रेजी काल से आज तक

1. रामायणकालीन: इस काल में मेरठ वास्तुकला के अदभुत् विद्वान एवं राक्षसों के विश्वकर्मा मयदन्त की राजधानी 'मयराष्ट्र' था। इसका महल पुरानी कोतवाली पर था। चारों ओर गहरी खाई थी जिसे अब खन्दक कहा जाता है। मयदन्त की पुत्री मन्दोदरी सुशिक्षित सभ्य, सुशील, सुन्दर, राजनीतिज्ञ एवं शास्त्रज्ञ थी। दोनों पिता-पुत्री ने मेरठ के लगभग चारों ओर तालाब बनवाये थे। उस समय मेरठ के चारों ओर वन था। इस वन में अनेक तापस तपस्या करते थे। वन के इसी स्थान पर एक तालाब (कुण्ड) था। शुद्ध वातावरण, तपस्थली, वैदिक ऋचाओं की स्वर लहरियों से तरंगित वायु-मण्डल, जंगली जड़ी-बूटियों, सूर्य की किरणों एवं जल के स्रोत का प्रभाव था कि इस कुण्ड के जल से चर्म रोग ठीक होते थे। सूर्य देव को दाद व कुष्ठ जैसे भयंकर रोगों को ठीक करने वाला सूर्य देव को माना गया है, इसलिए इसका नाम 'सूर्य कुण्ड' विख्यात हुआ। दृष्टव्य है-

विवस्वानादि देवश्च देव देवो दिवाकरः।
धन्वन्तरिर्व्याधिहर्ता दद्रु कुष्ठ विनाशकः।।

सूर्य भगवान का निवास व प्रभाव स्थल मान कर मन्दोदरी ने यहां पक्का तालाब निर्माण करा कर शिव मन्दिर की स्थापना कराई। इसका वास्तु शिल्प बिल्वेश्वर नाथ मन्दिर जैसा है। इसे आज भी मन्दोदरी का मन्दिर कहा जाता है। जनश्रुतियों के अनुसार महात्मा अगस्त्य ने आदित्य हृदय स्तोत्र की सिद्धि यहीं प्राप्त की थी। रावण से व्यथित हुए भगवान राम को अगस्त्य मुनि ने इसी शत्रु विनाशक आदित्य स्तोत्र की दीक्षा देकर रावण का अन्त कराया था। इसके विषय में कहा गया है -

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्व शत्रु विनाशनम्।
जया वह जपन्नित्यमृक्षय परमं शिवम् ।।

(वाल्मिकी रामायण)

2. महाभारत काल: महाभारत काल में यह स्थान खाण्डवी वन के नाम से प्रसिद्ध रहा। महाभारत के अनुसार दुर्वासा मुनि ने कुन्ती को एक मन्त्र देकर कहा था कि इस मन्त्र द्वारा जिस देवता का आह्वान करोगी वह उपस्थित होकर आशीष देगा। एक बार कुन्ती अपने परिवार सहित कुरु प्रदेश के भ्रमण काल में सूर्य कुण्ड पर आईं। सूर्य कुण्ड की महिमा देख-सुन कर मन्त्र परीक्षार्थ उसने सूर्य देव का आह्वान किया। सूर्य देव ने प्रकट होकर उसे पुत्रवती होने का आशीर्वाद दिया। यह आशीर्वाद ही कर्ण के रूप में प्रसिद्ध हुआ। इसीलिए कर्ण को सूर्य कुण्ड से विशेष लगाव था। विशेष उत्सवों पर आकर कर्ण यहां सूर्योपासना एवं दान करता था। अन्य राजा-महाराजा, साधु-सन्त एवं ऋषि मुनि भी आते जाते रहते थे। महाभारत के विनाशक युद्ध के पश्चात् यह काल के गर्त में खो गया।

3. अंग्रेजी काल: सूर्य कुण्ड के वर्तमान का प्रारम्भ बाबा मनोहर नाथ से होता है। सूर्य कुण्ड के एक ओर महान तपस्वी

एवं सिद्ध सन्त बाबा मनोहर नाथ रहते थे। बाबा मनोहर नाथ प्रसिद्ध सूफी सन्त शाहपीर के समकालीन थे। एक बार शाहपीर अपनी तपस्या का प्रभाव दिखाने शेर पर चढ़कर बाबा के पास आये। बाबा दीवार पर बैठे दातून कर रहे थे। शाहपीर को देखकर बाबा ने कहा 'चल री दीवार पीर साहब की अगवानी करनी है'। दीवार चल पड़ी। इन्हीं बाबा के पास लगभग 300 वर्ष पूर्व कस्बा लावड़ (मवाना के पास) के प्रसिद्ध सेठ एवं किसी शासक के खजांची लाला जवाहरमल (कोई सूरजमल बताते हैं) आये और अपने कुष्ठ रोग का इलाज पूछा। बाबा ने पीने एवं स्नान के लिए सूरज कुण्ड के जल का प्रयोग बताया। कुछ दिनों में लाला ठीक हो गये तब सन् 1700 (कहीं 1714) में लाला ने इस तालाब का विस्तार एवं जीर्णोद्धार कराया (मेरठ गजेटियर वोल्यूम IV)। यहां पर बन्दरों की बहुतायत थी इसीलिए अंग्रेज इसे 'मंकी टैंक' कहते थे।

नौचन्दी स्मारिका 1992 के अनुसार 1865 ई. में अंग्रेजों ने इसे नगर पालिका को सौंप दिया। बृहस्पति देव मन्दिर की दीवार पर 28 मई 1958 ई. का एक शिलालेख लगा है जिसमें नारी तालाब में स्नान का समय एवं नियम लिखे हैं। इस पर नगरपालिका अध्यक्ष के रूप में पंडित गोपीनाथ सिन्हा का नाम लिखा है। खुदाई में यहां पर भगवान बुद्ध एवं खजुराहो काल की मूर्तियां आदि अवशेष निकले हैं जो इसे पुरातात्विक खोज का विषय बनाते हैं। पहले यहां हाथी-ऊंट-घोड़े आदि की मण्डी भी लगती थी।

यहां पर एक बार सिखों के प्रथम गुरू श्री नानक देव के पुत्र श्रीचंद भी पधारे थे। उनके ठहरने के स्थान पर सन् 1937 में एक गुरूद्वारा भी स्थापित किया गया जो आज भी तालाब के नैर्ऋत्य कोण में स्थित है। यहां पर अनेक स्त्रियां सती भी हुई थीं। श्री ज्ञानों देवी का सती मन्दिर आज भी श्रद्धा का केन्द्र है। इसके पास अनेक मन्दिर बने हुए हैं। श्मशान घाट भी बना है। यहां पर रहने वाले अघोरी साधु क्रान्ति की चिंगारी सुलगाया करते थे। यहां के वीराने में क्रांतिकारियों की गुप्त बैठकें भी हुआ करती थीं। इसके अन्दर बनी ट्रैक (घूमने की पट्टी) लगभग 700 मीटर है जबकि बाहरी परिधि और भी अधिक है।

मेरठ के प्रथम मेयर अरुण जैन के समय में इस कुण्ड को भरने की पूरी तैयारियां हो चुकी थीं। परन्तु मेरठ के कुछ प्रबुद्ध नागरिकों के उठ खड़े होने के कारण वह योजना सफल नहीं हो सकीं। इस कार्य में सनातन धर्म रक्षिणी सभा, श्री विष्णुदत्त एवं प्रकाशनिधि शर्मा, एडवोकेट आदि का मुख्य सहयोग रहा।

1962 से कुछ पूर्व तक पानी से लबालब भरे सूरज कुण्ड में शहर के अनेक प्रतिष्ठित नागरिक नित्यप्रति नौका विहार के लिए आते थे। उस समय नौका का किराया पच्चीस पैसे (चवन्नी) मात्र हुआ करता था। उसके बाद इसमें कमल खिलने लगे और कमल ककड़ी, कमलपुष्प एवं कमल गट्टों का व्यापार होने लगा। कुछ समय पश्चात् जल कुम्भी ने अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया। बाद में यह एक दम सूख गया। भू-माफियाओं की नज़र से बचना इसका सौभाग्य ही कहा जायेगा। कुछ वर्ष पूर्व इसकी कीमत छः अरब रुपये आंकी गई थी। वर्तमान में पर्यटन विभाग इसका विकास पार्क के रूप में कर रहा है।

गंग नहर बनने के पश्चात् यह नहर से भरा जाने लगा। बाद में जब सम्पर्क राजवाहे का आबू नाला बन गया तो इसमें शहर का गन्दा पानी आने लगा। नगरवासियों के विरोध के कारण वह बन्द कर दिया गया। इस प्रकार खुशी से लहलहाते इस तालाब की मौत होना शहरवासियों के लिए एक चुनौती है।

सूर्य कुण्ड की एक विशेषता यह है कि 22 जून को जब सूर्य दक्षिणायन होते हैं तो वह पहले तालाब के ठीक उत्तर-पूर्वी (NE) कोने में दिखाई देते हैं और फिर धीरे-धीरे दक्षिण की ओर दिखाई देने लगते हैं। सूर्य की विशेष कृपा दृष्टि के कारण ही इसका नाम सूरज कुण्ड विख्यात हुआ। पंडित महेन्द्र पाल मुकुट इसकी दूसरी विशेषता बताते हैं कि 'पानी भरते ही इसमें बिना बीज डाले ही कमल उग आते हैं।'

पहले यह एक मील क्षेत्र में फैला हुआ था। पुरुष-महिलाओं के स्नानार्थ एवं पशुओं के पीने के पृथक-पृथक घाट बने थे। श्मशान के कारण तांत्रिक-अघोरी एवं जंगल के कारण नागा साधुओं का यह प्रिय स्थल था।

सूरज कुण्ड ही क्यों सूरज अथवा सूर्य तालाब क्यों नहीं? क्या है इसका रहस्य? यद्यपि कुण्ड शब्द तालाब का ही पर्यायवाची है लेकिन यह शब्द स्वयं में विशिष्ट है। जिस प्रकार विशाल तालाब को भी झील नहीं कहा जा सकता उसी प्रकार किसी भी तालाब को कुण्ड नहीं कहा जा सकता। कुण्ड प्राकृतिक होते हैं। जबकि तालाब मानव निर्मित (बाद में चाहे उन्हें पक्का करा कर तालाब का रूप दे दिया जाये) इनका आकार भी कुण्ड अथवा कुण्डा के आकार का होता है। कभी-कभी यह एक दम गहरा होता है तो कभी-कभी धीरे-धीरे गहराई की ओर चलता है। मेरी जानकारी में कांधला हरियाणा एवं हरिद्वार में मंशा देवी से लगभग दो किलोमीटर आगे भी सूरज कुण्ड है। अन्य स्थानों पर भी हो सकते हैं। तीनों के गुण-धर्म समान हैं। अर्थात् तीनों ही चर्म रोग नाशक हैं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि इनके पानी में विशिष्टता है। इसके दो कारण हो सकते हैं। पहला यह कि इनके भूमिगत पानी के स्रोत में ही विशिष्टता है। दूसरा यह कि इन पर सूर्य की कुछ विशेष किरणों का प्रभाव हो। यह सभी जानते हैं कि सूर्य के सात घोड़े सूर्य की सात रंगों की किरणें ही हैं। अर्थात् ऋषि-मुनियों (उस समय के वैज्ञानिकों) ने सूर्य की किरणों के प्रभाव क्षेत्र का पता लगा लिया था और यह कार्य कर्ण से सम्पन्न करा कर उनके कुण्डों का विस्तार किया। इसलिए इनके कुण्डों का नाम सूर्य कुण्ड पड़ा। एक बात अवश्य है कि कर्ण और इन सूर्य कुण्डों का सम्बन्ध किसी न किसी रूप में अवश्य रहा है। इसलिए इस कुण्ड का सूखना इस क्षेत्र का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा।

पिलोखड़ी का तालाब

मानवता एवं पर्यावरण के लिए कितना दुःखद है कि अनेक गांवों-ग्रामीण संस्कृतियों एवं तालाबों को उदरस्थ करने के पश्चात् भी लोहे-सीमेंट के डायनासोरों (शहरों) का पेट नहीं भरा। इन्हें गटकने के लिए दिनोंदिन उनका मुख सुरसा की भांति फैलता ही जा रहा है।

ऐसा ही एक गांव था श्याम नगर जो आज मेरठ शहर का मात्र एक मोहल्ला पिलोखड़ी रह गया है। किसी समय में भगवान कृष्ण के नाम पर बसाया गया यह गांव वृक्षों और जल सम्पदा से परिपूर्ण था। यहां के एक कच्चे और विशाल तालाब को आदमी की कोठियों की भूख निगल चुकी है और दूसरे पक्के एवं धार्मिक तालाब को निगलने की तैयारी है। यह तालाब एवं शिव मन्दिर ऋषि आश्रम के नाम से जाना जाता है

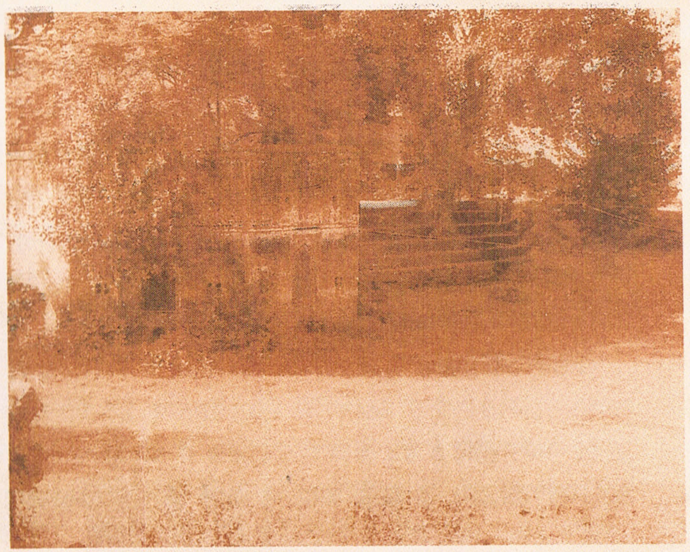

मेरठ शहर के पिलोखड़ी में मौजूद रामायण कालीन मन्दोदरी का तालाब

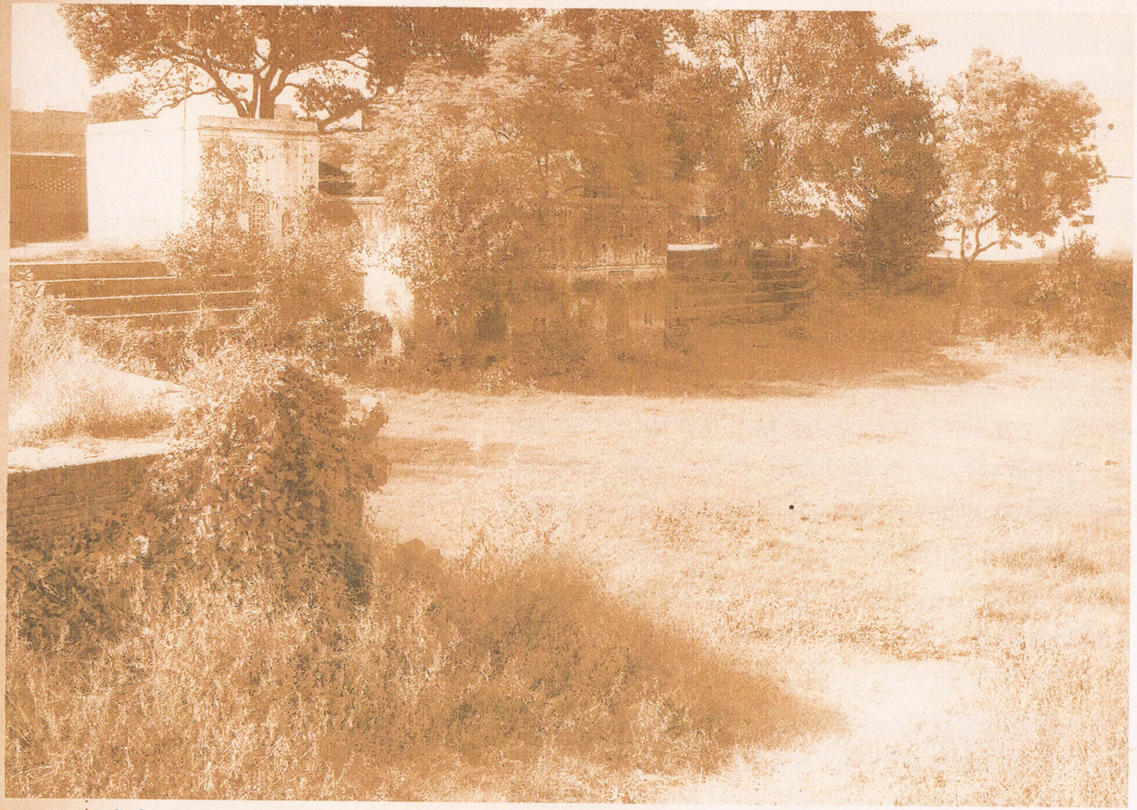

पिलोखड़ी के तालाब का एक और दृश्य

तथा यह ऋषि आश्रम नैमिशारण्य (जनपद सीतापुर) की एक शाखा एवं सम्पत्ति है।

गुरू-शिष्य परम्परा में अब इसके महंत स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती हैं जो नैमिशारण्य से यदा-कदा यहां आते जाते रहते हैं। उनके केयर-टेकर के रूप में यहां राजकुमार शर्मा सपरिवार रहते हैं। तालाब के रिहायशी क्षेत्र में अनेक किरायेदार रहते हैं जिनसे आश्रम का विवाद चल रहा है।

तालाब की प्रत्येक भुजा लगभग 55 मीटर है और गहराई लगभग 10-12 फुट। उतरने के लिए लगभग डेढ़-डेढ़ फीट ऊंचाई वाली सीढ़ियां हैं। तालाब के दक्षिण में पशुओं को पानी पीने एवं बाल्टियों से पानी बाहर ले जाने के लिए ढलावदार घाट बना है। तालाब के पश्चिम में लगभग 15 फुट ऊंची षटकोणीय दीवार बनाकर स्त्रियों के स्नानार्थ पृथक घाट बनाया गया है। इसी के साथ एक कमरा कपड़े आदि बदलने के लिए बनाया गया था। चारों ओर से बन्द यह घाट स्त्रियों के लिए सुरक्षित था।

किंवदन्तियों के अनुसार इसका निर्माण रावण के श्वसुर मयराष्ट्र (मेरठ) के अधिपति एवं राक्षसों के वास्तु-विशेषज्ञ मयदन्त ने कराया था। यह इसलिए सत्य प्रतीत होता है कि असली मेरठ (कोतवाली क्षेत्र) अत्यधिक ऊंचे टीले पर बसाया गया था और वहां तालाब का निर्माण असम्भव था। यह तालाब इस क्षेत्र के अत्यधिक समीप है। यहां पर मयदन्त का राजपरिवार एवं राजकुमारी मन्दोदरी स्नानार्थ आती थीं। राजाशाही शान-सुरक्षा एवं पर्दे की दृष्टि से इसके चारों ओर भवन एवं मन्दिर बनाये गये थे (कुछ आज भी हैं)। इसे आज भी मन्दोदरी का तालाब कहा जाता है।

जनाना घाट पर एक शिलालेख लगा है जिस पर अंग्रेजी-उर्दू एवं हिन्दी में निम्न प्रकार लिखा है।

SIBSAHAY-HARSAHAY CHAUDHARI SON OF
CHUTEIR SINGH
CHAUDHARI HAS MADE THIS TANK IN 1850 AT
MEÙKUT.

संवत 1816 नितना वंशाया शिवसहाय व हरसहाय चौधरी ज़मीदार मेरठ के ने।

शिलालेख के अनुसार इस टैंक (तालाब) का निर्माण मेरठ निवासी शिव सहाय ने सन् 1850 में कराया। लेकिन शिलालेख संदिग्ध लगता है क्योंकि इसमें वर्णित सन् एवं सम्वत् गणितीय दृष्टि से मेल नहीं खाते। 1850 ई. के अनुसार 2007 में इसकी आयु 157 वर्ष होती है। और इसके अनुसार उस समय वि. स. 1907 एवं शक सम्वत् 1772 होना चाहिए जबकि शिलालेख में सम्वत् (जो विक्रम सम्वत के लिए लिखा जाता है) 1816 लिखा है। यह विभेद क्यों?

तालाब की वर्तमान स्थिति अत्यधिक जीर्ण है जो 157 वर्षों में होनी असम्भव सी है। 200-250 वर्ष पुराने निर्माण भी उससे बेहतर स्थिति में हैं।

फिर सच क्या है? क्या यह शिलालेख झूठा है?

गहराई से देखने, सोचने और समझने से जो प्रतीत होता है उसका निष्कर्ष यह है कि जिस दीवार पर शिलालेख लगा है वह जनाना घाट की षटकोणीय दीवार है। यह दीवार सीढ़ियों पर खड़ी कर स्त्रियों के लिए पृथक स्नानागार (तालाब पर टैंक) का निर्माण किया गया है, अर्थात् शिलालेख वाले व्यक्ति शिवसहाय ने यह दीवार लगाकर केवल जनाना टैंक व कमरे का निर्माण कराया है। यदि शिव सहाय समस्त टैंक का निर्माण कराते तो शिलालेख उस दीवार पर न होकर स्वतंत्र रूप से स्थापित होता। इसका तात्पर्य है कि उस समय तालाब सही एवं पानी से परिपूर्ण था और स्त्रियों के स्नान की समुचित व्यवस्था एवं पर्दा नहीं था इसलिए शिव सहाय ने स्त्रियों के लिए पर्दायुक्त इस छोटे टैंक का निर्माण ही कराया। उससे पूर्व रामायणकालीन इस स्थान का जीर्णोद्धार/निर्माण किसी अन्य व्यक्ति द्वारा कराया गया प्रतीत होता है जिसके विषय में इतिहास मौन है। वर्तमान में यह स्थान शत्रु दमन तीर्थ के नाम से मुकदमेबाजों में विशेष प्रसिद्ध है क्योंकि ऐसा विश्वास किया जाता है कि यहां पूजा करने से शत्रुओं का नाश एवं मुकदमे में जीत होती है। ऐसे लोग विशेष रूप से पूजा-अर्चना एवं मनौतियां करते हैं। शत्रु दमन तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध होने का कारण पुराणों में वर्णित वह आख्यान है जिसमें बताया गया है कि परशुराम के पिता जमदग्नि ऋषि ने देवताओं के शत्रु प्लक्ष राक्षस का वध यहीं पर किया था। प्लक्ष से पलख-पलोखरी होते-होते यह पिलोखड़ी हो गया। इस प्रकार रामायणकालीन यह पवित्र तालाब सम्भवतः अपने विनाश की ओर अग्रसर है।

लुप्त नवचण्डी ताल

नवचण्डी से सम्बद्ध नवचण्डी ताल एवं नौचन्दी के विषय में सोचते ही मेरठ के प्रसिद्ध कवि स्वर्गीय रघुवीर शरण 'मित्र' की निम्न पंक्तियां अनायास ही याद आ जाती हैं-

जब से धरा जब से गगन, तब से बने फल फूल हैं,
सब मेल मेले रात दिन, हर जिन्दगी के मूल हैं।
हम हर्ष से उत्कर्ष से, पूजा सभी की कर रहे,
मां चण्डी के बाले मियां, हम दीप चुन-चुन धर रहे।।

कितना दुःखद है कि मेरठ में रहते हुए भी मेरठवासी इस नवचण्डी ताल से एकदम अनभिज्ञ हैं, और हों भी क्यों न, यह शासन-प्रशासन आदि सभी की उपेक्षा का शिकार रहा है। मेरठ की पहचान यदि नौचंदी से है तो नौचंदी के मूल में यही तालाब एवं नवचण्डी (नौ देवियों) का मन्दिर है। इसका इतिहास भी मन्दोदरी से ही प्रारम्भ होता है। मन्दोदरी मयदन्त की अतीव सुन्दर, सुशील, उच्च शिक्षित एवं विदुषी पुत्री थी। वह अति तपस्विनी, राजनीतिज्ञ एवं युद्धकौशल में निपुण थी। शतरंज (CHESS) का आविष्कार मन्दोदरी ने ही किया था। वह भगवान शिव एवं माता पार्वती (दुर्गा अथवा शक्ति) की अनन्य उपासक थी। मन्दोदरी शिव की पूजा करने बिल्वेश्वर महादेव (सदर) मन्दिर जाती थी तो शक्ति की उपासना करने नवचण्डी आती थी। नवचण्डी की स्थापना भी मन्दोदरी ने ही कराई थी। भगवान भोले नाथ की पूजा हेतु उसने बिल्व का वन लगा रखा था तो शक्ति की पूजा हेतु यहां स्थित तालाब में कमल खिलते थे। 1017 ईस्वी में महमूद ग़जनवी के मेरठ आक्रमण में उसके

सिपहसालार सैय्यद सालार मसूद गाजी खून खराबे से विरक्त होकर फकीर बन गए थे। 1194 ई. में कुतुबुद्दीन ऐबक ने उनका मकबरा बनवाया जिसे बाले मियां की दरगाह कहते हैं। लेकिन उसने चण्डी मन्दिर को ध्वस्त कर दिया। इसका निर्माण बाद में महारानी अहिल्याबाई ने कराया। नौचन्दी के प्रारम्भ काल का निश्चित समय तो किसी को ज्ञात नहीं लेकिन इतना जरूर है कि एकदम सुनसान जंगल में लगने वाला यह मेला अपने प्रारम्भिक काल में एक दिन के लिए ही केवल दिन-दिन में लगता होगा जिसमें देवी मां की पूजा से सम्बन्धित सामान एवं प्रसाद आदि ही बिकता होगा। धीरे-धीरे यह दो दिन का लगने लगा। दूर-दूर से आने वाले भक्तों और लोकप्रियता को देखकर 1884 में अंग्रेज कलेक्टर एफ0 एफ0 राइट ने इसकी अवधि सात दिन कर दी जो अब एक माह हो गई है। राइट ने यहां पशु मेला भी प्रारम्भ कराया था पर अब यह समाप्त हो गया है। पहले यहां दूर-दूर तक जंगल होने के कारण व्यापारी अपनी गाड़ियां मेले के चारों ओर लगा कर एक प्रकार से सुरक्षा कवच बना देते थे। नौचन्दी स्मारिका 2003 के अनुसार नौचन्दी का प्रारम्भ 2007 से 813 वर्ष पूर्व अर्थात् 1194 ईस्वी में हुआ। यह मेला साम्प्रदायिक सौहार्द का प्रतीक है। नौचन्दी में गुप्त रूप से स्वतन्त्रता का प्रचार भी किया जाता था। इसी कारण 1858 में नौचन्दी का मेला नहीं लगा। इसी वर्ष अंग्रेज सरकार ने महान् स्वतंत्रता सेनानी धुंधुपंथ को पकड़ने के लिए उनका चित्र एवं इश्तहार चिपकाये थे।

नौचन्दी के प्रसिद्ध हलवा-परांठा का प्रारम्भ लाहौर से आये एक सज्जन ने किया था। सन् 1945 ई. में उन्होंने घण्टाघर क्षेत्र में हलवा-परांठा की दुकान भी खोली थी। बच्चों को हलवा-परांठा मुफ्त बांटते थे। कुछ समय पश्चात् वे लाहौर चले गये। लोग उन्हें तो भूल गये लेकिन हलवा-परांठा नौचन्दी की शान बन गया।

ऐसे ही एक मेले का प्रारम्भ 1954 में मोहल्ला देवपुरी से सटे बड़े कब्रिस्तान में शाहगंज-ए-इल्म के शानदार मकबरे पर यहां के मुतवल्ली और नगरपालिका के पूर्व अध्यक्ष श्री एल0 एच0 जुबैरी ने नौचंदी से ठीक एक सप्ताह पहले लगाना शुरू किया था। कुछ वर्ष लगने के बाद यह उर्स बन्द हो गया। उक्त पीर शाह-ए-गंज ने 1378 ई. में मक्का से आकर मेरठ को अपनी कर्म भूमि बनाया था। देश बंटा तो दिल भी बंट गये। सन् 1947 ई. के पश्चात् हलवे वाले पुनः नहीं आये।

इस प्रकार यह छोटा सा नवचण्डी ताल स्वयं में युगों-युगों का इतिहास समेटे है। प्रारम्भ में कच्चे ताल को बाद में किसने पक्का कराया इस विषय में किसी को कोई जानकारी नहीं है।

सालार मसउद अथवा बाले मियां के विषय में आपने ऊपर पढ़ा लेकिन यहां हम अपने सुधी-पाठकों एवं इतिहासविदों के लिए एक गुत्थी लिख रहे हैं। जिनके पास इसका स्पष्टीकरण हो कृपया लेखक को भेजने एवं पत्र-पत्रिकाओं में उद्धृत करने की कृपा करें। उपरोक्त कहानी में सालार मसउद का फकीर होना बताया गया है लेकिन एक अन्य पुस्तक के अनुसार सालार मसउद महमूद गजनवी के बहनोई एवं सेनापति सालार साहू का लड़का था जो गजनी चला गया था। उसने मुल्तान, अजमेर, सिंध, दिल्ली, मेरठ, कन्नौज आदि को लूटकर सतरख (प्राचीन नाम सप्तऋषि) जिला बाराबंकी को अपनी राजधानी बनाया। श्रावस्ती के राजा सुहलदेव की सहायता से हिंदु राजाओं से युद्ध में दिनांक 14 जून सन् 1033 ई. को सालार मसउद मारा गया। मसउद के सिकंदर नामक गुलाम एवं अन्य नौकरों ने समीप के बाल सूर्य मन्दिर एवं तालाब 'बालार्क कुण्ड' पर उसकी एक छोटी सी कब्र बना दी। बालार्क कुण्ड का मेला पूर्व की भांति लगता रहा। सन् 1335 ई. में तुगलक बहराइच आया और मौलवियों के कहने पर बालार्क कुण्ड-मन्दिर को नेस्तनाबूद करके मकबरा एवं दरगाह बना दिया। उसे बाले मियां का मजार एवं मेले को बाले मियां का उर्स कहने लगे। धीरे-धीरे लोग बालार्क कुण्ड को भूल गये और याद रह गया बाले मियां। सही कौन और क्या है- मेरठ के बाले मियां या बहराइच के बाले मियां?

एक लुप्त सरोवर – शहीद स्मारक

मेरठ शहर, रोडवेज बस स्टैण्ड से थोड़ा सा आगे तहसील मेरठ मुख्यालय के सामने है शहीद स्मारक अथवा भैंसाली मैदान। इसमें एक अशोक स्तम्भ एवं स्वतंत्रता संग्राम संग्रहालय बना है। किसी समय यहां अनेक स्वतंत्रता सैनिकों को फांसी दी गई थी। 1857 स्वतंत्रता संग्राम के महानायक परीक्षितगढ़ निवासी कुंवर कदम सिंह को भी उसके 74 साथियों सहित रात्रि में गुप्त रूप से यहीं फांसी पर लटकाया गया था। इस लुप्त सरोवर में स्वतंत्रता सेनानियों के अनेक शस्त्र भी दफन हैं।

उससे पूर्व यह स्थान सती-सरोवर के नाम से विख्यात था। यहां पर बेलपत्र के वृक्षों का अति विशाल वन एवं शिव मन्दिर था। बिल्व के वन से घिरे रहने के कारण ही यह आज तक बिल्वेश्वर महादेव के नाम से प्रसिद्ध है। मयराष्ट्र के स्वामी मयदन्त की पुत्री मन्दोदरी रावण के साथ पाणिग्रहण से पूर्व तक यहां प्रतिदिन स्नानार्थ आती थी। स्नान के पश्चात् वह बिल्वेश्वर महादेव मन्दिर में बिल्व पत्रों द्वारा पूजा अर्चना करके रावण को पति रूप में प्राप्त करने की कामना करती थी। मन्दोदरी के साथ में उसकी दो अन्तरंग सखियां ऋचा एवं रम्भात विशेष रूप से हुआ करती थीं। ये दोनों सुन्दर एवं विदुषी कन्याएं मय के दो पुरोहितों, ऋचा ऋण केतु की तो रम्भात त्रिआस्वान की थीं। इन तीनों ने सदैव एक साथ रहने की कसमें खाई थीं इसलिए तीनों अपनी कसमों को पूर्ण होने की प्रार्थनाएं भी बिल्वेश्वर भगवान से करती थीं। भगवान ने तीनों की प्रार्थनाएं सुनीं और मन्दोदरी-रावण विवाह के साथ ही ऋचा का विवाह विभीषण और रम्भात का विवाह कुम्भकर्ण से हो गया। (देखें लेखक की अन्य पुस्तक 'रावण चरितम्') लाखों वर्षों से जलाभिषेक होते-होते बिल्वेश्वर शिवलिंग घिस कर समाप्त सा हो गया है और अब उसके ऊपर तांबे का खोल चढ़ा रखा है। यह इसकी प्राचीनता का प्रमाण है। यहां पर अब एक संस्कृत महाविद्यालय चल रहा है। परन्तु किसी समय मन्दोदरी एवं उसकी सखियों के साथ खिलखिलाने वाले इस विशाल सती सरोवर के अब तो आंसू भी सूख चुके हैं।

श्रीराम ताल

मेरठ दिल्ली मार्ग पर नवीन मण्डी स्थल के समीप है रामलीला मैदान। दोनों के बीच में है श्रीराम पैलेस पब्लिक स्कूल, श्रीराम प्लाईवुड एवं श्रीराम मन्दिर एवं तालाब। यह समस्त सम्पत्ति पूर्व समय से ही लाला नरेन्द्र कुमार एवं लाला वीरेन्द्र कुमार अग्रवाल परिवार की पैतृक सम्पत्ति है। सैंकड़ों वर्ष पूर्व से 40-50 वर्ष पहले तक यह कृषि भूमि एवं जंगल था। उससे भी पूर्व यहां उपरोक्त अग्रवाल परिवार का जमींदारा था। लगभग 1780 ई. में इसी परिवार के एक सदस्य लाला रामशरण दास ने अपनी भूमि में अपने पैसे से श्रीराम के इस मन्दिर एवं तालाब का निर्माण कराया था। लेकिन सब कुछ ईश्वर का

मानते हुए उन्होंने अपने नाम आदि का कोई शिलालेख नहीं लगाया। लगभग 40 वर्ष पहले तक यह तालाब एक राजवाहे द्वारा गंग नहर के जल से भरा जाता था जिसकी आबपाशी दी जाती थी। राजवाहा समाप्त होने पर इसी परिवार द्वारा लगाये गये नलकूप से इसे भरा जाने लगा। कुछ वर्ष पूर्व तालाब के तल को पक्का करा दिया गया तो इसमें पानी रुकना बन्द हो गया। इसलिए अब यह सूख गया है। इसकी देख-रेख व्यवस्था आदि भी उपरोक्त परिवार ही कर रहा है।

पक्का तालाब

मेरठ जनपद के मवाना कस्बे में मौजूद महाभारत कालीन पक्का तालाब

जनपद मेरठ की एक तहसील है मवाना जो मेरठ से लगभग 30 किलोमीटर है। मवाना-मीरापुर मार्ग पर थाने से लगभग 200 मीटर पर हस्तिनापुर चुंगी एवं मोड़ है। यहीं पर है मवाना का प्रसिद्ध पक्का तालाब। इस तालाब के नाम पर ही इस मोहल्ले का नाम भी पक्का तालाब मोहल्ला प्रसिद्ध हो गया। पूर्व में कुरुवंश की राजधानी हस्तिनापुर का 'मुहाना' (प्रवेशद्वार, मेन गेट या मुख्य द्वार) ही वर्तमान में मवाना नाम से प्रसिद्ध हुआ। बुजुर्ग लोग बताते हैं कि उन्होंने थाने के समीप बने हुए दो 'मुहानों' (द्वारों) को अपनी आंखों से देखा है। एक द्वार हस्तिनापुर का तो दूसरा परीक्षितगढ़ का था। इसी द्वार के समीप स्थित था यह तालाब। राजधानी का मुख्य द्वार बंद होने पर बाहर से आये व्यक्ति इसी तालाब पर रात्रि विश्राम भी करते थे। सुबह को यहीं स्नान ध्यान एवं द्वार के पास के बाजार में कलेवा करके यात्री राजधानी में प्रवेश करते थे। आज भी शहर स्थित सोसाइटियों के द्वार इसी तर्ज पर बन्द कर दिये जाते हैं। सुरक्षात्मक दृष्टि दोनों कालों में समान थी। इस तालाब का इतिहास महाभारत से भी प्राचीन है।

इसी तालाब के ठीक सामने एक सरकारी ठेकेदार मझले हसन पंवार (पंवार राजपूत रांघड) रहते हैं जो काफी आमिल और फाजिल (पढ़े-लिखे एवं गुणी) हैं। वे स्वयं (पंवार गोत्र) को भगवान राम का वंशज बताते हुए गर्वोन्नत होते हैं। रामायण धारावाहिक की सीता (दीपिका) ने जब अन्य फिल्मों में कार्य किया तो मझले हसन ने बहुत बुरा मानते हुए लेखक से कहा था कि "यह सीता का अपमान है। जिस कलाकार ने सीता जैसी सती का महान चरित्र चित्रित किया हो वह अन्य फिल्मों में फूहड़, नृत्यादि करे इससे बुरा क्या होगा? जिन लोगों ने उसमें सीता की छवि देखी है उनके दिल पर क्या गुजरेगी? ये ठेकेदार श्रुति परम्परा के आधार पर इस तालाब का सम्बन्ध शकुन्तला से जोड़ते हैं। कौन थी शकुन्तला?

महाभारत के आदि पर्व के अनुसार विश्वामित्र की तपस्या भंग करने हेतु देवता मेनका को भेजते हैं। फलस्वरूप शकुन्तला का जन्म होता है। मेनका द्वारा कन्या को त्याग देने पर उसका पालन-पोषण कण्व ऋषि करते हैं। शिकार खेलते हुए एक बार महाराजा दुष्यंत कण्व आश्रम पहुंचते हैं। ऋषि की अनुपस्थिति में दुष्यंत-शकुन्तला का गन्धर्व विवाह हो जाता है। गर्भवती शकुन्तला को पुनः आने का वचन एवं प्रेम निशानी के रूप में अपना नाम लिखी अंगूठी देकर दुष्यंत चले जाते हैं। एक दिन दुर्वासा ऋषि आते हैं। दुष्यंत के ध्यान में डूबी शकुन्तला द्वारा ऋषि को प्रणाम न करने पर ऋषि उसे श्राप देते हैं कि जिसके ध्यान में तू डूबी है वह तुझे भूल जायेगा। शकुन्तला के द्वारा समस्त घटना बताने एवं अनुनय विनय के पश्चात् ऋषि कहते हैं कि जब वह तेरी प्रेम निशानी देखेगा तो सब कुछ याद आ जायेगा। प्रसव काल समीप आने पर कण्व ऋषि अपने शिष्यों के साथ शकुन्तला को दुष्यंत के पास हस्तिनापुर भेजते हैं। मार्ग में एक तालाब में पानी पीते समय शकुन्तला की वह अंगूठी पानी में गिर जाती है और उसे एक बड़ी मछली सटक लेती है। श्राप-वश दुष्यंत शकुंतला को पहचानने से मना कर देते हैं। शकुन्तला कश्यप ऋषि के आश्रम में चली जाती है। वहां उसे पुत्र पैदा होता है। इधर वह मछली मछेरे के द्वारा पकड़ी जाती है। चीरने पर अंगूठी निकलती है। मछेरा अंगूठी राजा दुष्यंत को देता है। राजा को शकुंतला की याद सताने लगती है। लेकिन ढूंढने पर भी वह कहीं नहीं मिलती। कुछ वर्षों पश्चात् राजा कश्यप ऋषि के आश्रम में पहुंचते हैं। वहां वह एक सुकुमार बच्चे को सिंह शावक से खेलता देखते हैं। बच्चा कहता है कि वह तो इसके दांत गिन रहा है। राजा द्वारा बच्चे को गोद में उठाने पर एक ऋषि कन्या कहती है कि इसे तो इसका पिता ही गोद में उठा सकता है, अन्य द्वारा उठाये जाने पर इसके हाथ में बंधा गण्डा सांप बन कर उसे डस लेगा। शकुंतला-दुष्यंत का मिलन होता है। दुष्यंत शकुन्तला को घर ले आता है और यह बच्चा भरत नाम से विख्यात होता है। कहा जाता है कि इसी के नाम पर यह देश भारत वर्ष के नाम से विख्यात हुआ। ठेकेदार बताते हैं कि शकुन्तला की अंगूठी इसी तालाब में गिरी थी। यह इसलिए भी सत्य प्रतीत होता है क्योंकि यह तालाब राजधानी के प्रवेश द्वार पर था। प्रवेश से पूर्व यहां रुक कर उसने व साथ के ऋषियों ने मार्ग की थकान उतारने हेतु यहां कुछ देर विश्राम किया होगा। सम्भवतः रात्रि विश्राम भी किया हो। यहीं पर हाथ-मुंह धोकर अथवा नहा कर रास्ते की धूल आदि उतार कर स्वयं को व्यवस्थित करने का इससे उत्तम स्थान और कौन सा हो सकता था? समीप का मछेरा ही अंगूठी की सही पहचान कर राजा के पास जा सकता था। यह कहानी कालिदास रचित अभिज्ञान शाकुंतलम् की है। महाभारत आदि पुराणों में अंगूठी खोने का प्रसंग नहीं है। राजा शकुन्तला को पहचान कर भी पहचानने से मना कर देता है (सामाजिक कारण)। मेनका आकाशवाणी द्वारा सत्य उद्घाटित करती है। राजा शकुन्तला को स्वीकार कर लेता है।

किवंदन्तियों में इसे कुन्ती का तालाब कहा जाता है, अर्थात महाभारत काल में (युद्ध से बहुत पूर्व) पाण्डु की पत्नी एवं पाण्डवों की माता कुन्ती ने इसका जीर्णोद्धार कराया था। अति पावन भूमि होने के कारण वह पर्वों पर यहां स्वयं भी स्नान करने आती थीं। बाद में इसका उपयोग यात्रियों के लिए किया जाने लगा। महाभारत युद्ध के पश्चात् यह स्थान वनाच्छादित हो गया। लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व यह समस्त क्षेत्र वैश्यों के ज़मींदारे में आ गया। इसके उत्तर में वैश्यों का 40 बीघे का बाग भी था। उस समय इसका जीर्णोद्धार जानसठ निवासी केशवदास ने कराया। इसके एक किनारे पर बारहा दरी (बारह दरवाजों वाली इमारत या बरामदा) एवं उसके सामने एक चबूतरा बनवाया (स्नान आदि के पश्चात् जलाशय के किनारे पर बैठने का एक अलग ही आनन्द था)। तालाब में चारों ओर सीढ़ियां एवं पूर्व की ओर एक घाट बना था। चारों कोनों पर चार बुर्ज बने थे जिनमें से एक आज भी है। यहीं पर एक पीर बना है। पीर का नाम नूर खां पठान बताया जाता है। तालाब

लगभग 4-5 एकड़ का है। तालाब एवं इससे सम्बन्धित भूमि दो परिवारों की थी।

1. एक परिवार पत्थर वालों के नाम से विख्यात था जिसके नाम आदि का पता नहीं चलता। सम्भवतः वह मेरठ में कहीं रहते हैं।

2. दूसरा परिवार था वेद कौशिक वैश्य मवाना का। यह परिवार भी बाहर चला गया।

पत्थर वालों ने लगभग 40-50 वर्ष पूर्व अपने हिस्से की भूमि एवं तालाब अपने दामाद हरीश पुत्र मुरलीधर निवासी मवाना को दे दिया। उन्होंने यह भूमि बेच दी। पता चलने पर पत्थर वालों ने तालाब के विक्रय प़र रोक लगा दी। वेद कौशिक ने यह भूमि और तालाब मवाना के नजबुद्दीन एवं जीजुद्दीन को बेच दी। पूर्व पंचायती योजना के नगरपालिका अध्यक्ष ने इस पर पालिका का दावा कर दिया था। अब अदालत में वाद विचाराधीन है (ठेकेदार मंझले हसन से वार्तालाप के आधार पर)। तालाब के समीप झाड़खण्डी महादेव मन्दिर इसकी ऐतिहासिकता स्वयं सिद्ध करता है।

अब यह तालाब अपनी दुर्दशा पर आंसू बहा रहा है। कचरे के ढेर एवं बदबू इसकी नियति बन चुके हैं। जिस बारहदरी में बैठकर कभी गर्व का अनुभव होता था वहां आज बच्चे शौच करते देखे जा सकते हैं। कुछ पुस्तकों के आधार पर मवाना को दुर्योधन के मुंह लगे शिकारी 'माना' द्वारा स्थापित बताया जाता है।

दुर्वासा ताल

फिरोजपुर गांव के निकट स्थित महाभारत कालीन दुर्वासा ताल

मवाना-मुजफ़्फ़रनगर मार्ग पर बहसूमा से पूर्व ठीक सड़क के किनारे स्थित है फिरोजपुर महादेव मन्दिर। मन्दिर के ठीक सामने एक प्राचीन कुआं और ईशान (NE) में है दुर्वासा ताल। तालाब एवं मन्दिर महाभारत से भी प्राचीन हैं। श्रुति परम्परा से इस स्थान को दुर्वासा ऋषि की तपस्थली होने का गौरव प्राप्त है। दुर्वासा ऋषि उच्च कोटि के तपस्वी एवं अत्यधिक क्रोधी स्वभाव के थे। कौरव-पाण्डव सहित सभी महान शक्तियां अपनी इच्छा पूर्ति हेतु दुर्वासा के चरणों में आती रहती थीं। कुन्ती भी अपने पुत्रों की जीत का वरदान लेने ऋषि की सेवा में उपस्थित हुई थी। महाभारत के पश्चात् सब कुछ समाप्त हो गया तो यह स्थान भी मिट्टी के टीले में परिवर्तित हो गया। मुगल काल में ग्वाले यहां गाय चराते तो संध्या समय एक गाय इस टीले के एक निश्चित स्थान पर खड़ी हो जाती तथा उसके थनों से स्वयं दूध की धार बहने लगती। दूध समाप्त हो जाता। सन्देह होने पर छिपकर देखा गया तो यह बात सामने आई। उस स्थान को खोदने पर वर्तमान शिवलिंग प्रकट हुआ। मुस्लिम जमींदार इसे

खोदकर निकालने में विफल हुआ। बाद में भक्त लोग पूजा-अर्चना के द्वारा अपनी मनोकामनाएं पूर्ण करने लगे। अब यहां कांवड़ के अवसर पर वर्ष में दो बार मेला लगता है। इसे शिव की सिद्ध पीठ माना जाता है। अब यहां पर्यटन विभाग की ओर से विकास कार्य किये जा रहे हैं।

दुर्वासा ताल अपेक्षाकृत छोटा लेकिन पक्का एवं सुन्दर है। यद्यपि अब इसमें पानी नहीं है, टूट-फूट भी चुका है लेकिन यह कभी अत्यधिक सुन्दर रहा होगा।

अनेक बार इसके जीर्णोद्धार का बीड़ा उठाया गया लेकिन स्वार्थी तत्वों ने कहीं कुछ नहीं होने दिया। सज्जन मनुष्यों की तो बात ही क्या शासन-प्रशासन भी अराजक तत्वों के सामने पंगु बना हुआ है।

कुएं के विषय में कहा जाता है कि इधर से जाते हुए किसी बनजारे की स्त्री को प्रसव पीड़ा हुई तो यहां पड़ाव डाल दिया गया। पुत्र जन्म हुआ तो पूजने के लिए यहां कोई कुआं नहीं था, इसलिए उसने यहां इस कुएं का निर्माण करा कर कुआं पूजन की रीति पूर्ण की। अब इस कुएं में मन्दिर का पानी जाता है। कुआं लगभग 200 वर्ष प्राचीन है।

गांधारी तालाब

मेरठ मुख्यालय से 25 किलोमीटर पूर्व, मवाना से 12 किलोमीटर दक्षिण एवं किठौर (मेरठ-मुरादाबाद रोड) से 12 किलोमीटर उत्तर में स्थित है किला परीक्षितगढ़। गंगा यहां से 12 किलोमीटर पूर्व में है। अर्जुन के पौत्र एवं अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित द्वारा स्थापित इस कस्बे को कुरुवंश अथवा पाण्डवों की कार्यकारी राजधानी होने का गौरव प्राप्त है। रामायण काल में भगवान राम के चरणों से पावन एवं उपकृत हुए परीक्षितगढ़ को रावण एवं उसके श्वसुर मयदन्त द्वारा रक्षित होने का गर्व भी है।

महाभारत युद्ध समाप्त तथा युधिष्ठिर का राज्याभिषेक हो चुका है। गांधारी अपने 99 पुत्रों की मृत्यु जनित पीड़ा से पीड़ित होकर युधिष्ठिर से हस्तिनापुर से दूर कहीं पवित्र एवं ऋषि आश्रमों के समीप में एकान्तवास एवं तपस्या की इच्छा प्रकट करती है। विचार-विमर्श के पश्चात् युधिष्ठिर वर्तमान परीक्षितगढ़ के वनखण्ड को गांधारी के योग्य पाते हैं क्योंकि यहां पर रामायण काल से भी पूर्व काल में ब्रह्मवेत्ता एवं विदुषी नारी गार्गी के आश्रम के अवशेष थे। इस तालाब में गांधारी पहले भी स्नान हेतु आती रही थी। इसी क्षेत्र में गर्ग, अगस्त्य, मार्कण्डेय,

मेरठ जनपद के परीक्षितगढ़ कस्बे में मौजूद गांधारी सरोवर

शृंग ऋषि, च्यवन ऋषि आदि महान ऋषियों के आश्रम भी हैं। चारों ओर हरियाली सुख-सुविधा एवं ऋषि दर्शन के साथ-साथ भक्ति योग्य एकान्त भी है। युधिष्ठिर सोचते हैं कि माता को ऋषि सान्निध्य भी मिलता रहेगा तथा हस्तिनापुर से अधिक दूर न होने के कारण वह भी भाईयों सहित माता के दर्शन करते रहेंगे।

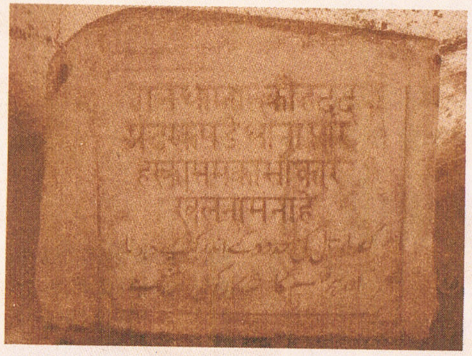

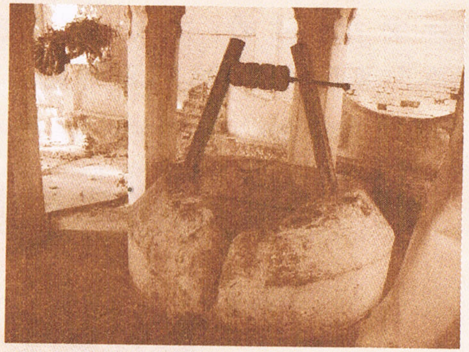

गांधारी सरोवर के निकट मौजूद शिलालेख व पुरातन कुआं

दुःखी मन से गार्गी आश्रम का जीर्णोद्धार किया जाता है। माता गांधारी के आदेश पर यहां पक्का तालाब एवं शिव मन्दिर बनाया जाता है। माता के निवास एवं सुख सुविधाओं के लिए महल का निर्माण कराया जाता है। माता यहां सुखपूर्वक निवास, ऋषियों का सत्संग एवं भक्ति करते हुए एकान्तवास में जीवन के शेष दिन पूर्ण करती हैं। यह तालाब ही गांधारी तालाब के नाम से आज तक विख्यात है। कहा जाता है कि वेद व्यास ने महाभारत का उत्तरार्द्ध यहीं लिखा था।

महाभारत के युद्ध को 5000 वर्ष हो जाते हैं। राजधानियां, महल, भव्य भवन धूल धूसरित हो जाते हैं। गांधारी तालाब भी अवशेष मात्र बचता है। लो! यह आ गया ई. सन 1789। परीक्षितगढ़ के गुर्जर राजा जैत सिंह के सेनापति खेमकरण शर्मा राजा के बाद प्रथम शक्तिशाली व्यक्ति हैं। उनकी फुआ राजा की पुरोहिताइन है। खेमकरण ब्रह्मचारी (विवाह नहीं किया) तो फुआ संतानहीन। फुआ अपनी सम्पत्ति खेमकरण को देना चाहती है लेकिन खेमकरण किसे दे?दोनों में विचार-विनिमय के पश्चात निर्णय किया जाता है कि इस सम्पत्ति से गांधारी तालाब का जीर्णोद्धार कराया जाए।

खुदाई के मध्य शिवलिंग दृष्टिगोचर होता है। उखाड़ने के प्रयत्न में वह और गहरा होता चला गया तो खुदाई रोक दी गई। उस पर मन्दिर का निर्माण कराया गया। शिवलिंग इतना प्राचीन था कि उसमें जलाभिषेक से कटान हो गयी थी। उसे खण्डित जान कर मन्दिर में दूसरा शिवलिंग स्थापित किया गया। आज भी दोनों शिवलिंग जल से घिसकर और छोटे होते जा रहे हैं। गांधारी परिसर से हस्तिनापुर, देवी मन्दिर और महल को सुरंगें जाती थीं। अत्यधिक भराव होने के कारण उनके अवशेष प्राप्त नहीं होते।

मन्दिर से सटे हुए दो प्राचीन नन्दीगण स्थापित हैं। पहले वे वर्ष में एक बार अपना स्थान परिवर्तन करते थे अर्थात् छोटा बड़े के और बड़ा छोटे के स्थान पर आ जाता था। फिर इस क्रम का समय अनिश्चित हो गया।

वर्तमान में तालाब लगभग 20 फीट गहरा है। इसकी लम्बाई 60 एवं चौड़ाई 50 मीटर के लगभग है। तालाब में उतरने के लिए सीढ़ियां हैं और यह कलात्मक ढंग से बना हुआ है। यह कभी पूर्ण रूपेण सूखता नहीं। समय-समय पर नगरवासी इसका जीर्णोद्धार कराते रहे हैं। इस समय पर्यटन विभाग के द्वारा महाभारत सर्किट के अन्तर्गत इसका जीर्णोद्धार कराया जा रहा है। इस समय इसकी देख-भाल गांधारी तीर्थ विकास समिति कर रही है।

मन्दिर के समीप उसी समय का कुआं है। गांधारी तालाब के पास लगभग 15 एकड़ का कच्चा तालाब है जिसे झील के रूप में विकसित किया जा सकता है। लेकिन इस स्थान के विकास में जहां नगर निवासी ही रोड़ा बनते हैं वहीं प्रशासन भी मौन है। नगर पंचायत एवं समीप के निवासी वहां कूड़ा-करकट डाल रहे हैं। आखिर ऐतिहासिक तालाबों की ऐसी दुर्दशा क्यों?

केशिकी अथवा कौशिकी तालाब

परीक्षितगढ़ से बढ़ला मार्ग पर लगभग 1.5 किलोमीटर दूर स्थित है शृंग ऋषि आश्रम एवं केशिकी ताल। वर्तमान का यह छोटा सा ताल किसी समय (रामायण काल में) निर्मल जल से छलछलाती केशिकी अथवा कौशिकी नाम की एक विशाल नदी थी। उसका अवशेष यह छोटा सा ताल आज चीख-चीख कर बोल रहा है कि यदि जल के प्रति यूं ही उपेक्षा होती रही तो एक दिन तरस जाओगे बूंद-बूंद को। लेकिन हम हैं कि सुनने को तैयार ही नहीं।

इसका इतिहास कुछ इस प्रकार हैः अर्जुन के पौत्र एवं अभिमन्यु के पुत्र तथा हस्तिनापुर के साम्राज्याधिपति राजा परीक्षित को शिकार के लिए वन में भटकते हुए एक विशाल देह एवं काले रंग का कुरूप पुरुष दृष्टिगोचर होता है जो एक बैल एवं गाय को पीटते हुए ले जा रहा था। राजा द्वारा उस पापी को डांटने पर वह राजा को अपना परिचय कलियुग एवं धर्म (बैल) तथा पृथ्वी (गाय) के रूप में देकर कहता है कि उसका समय आ रहा है अतः पृथ्वी पर ऐसे ही अनर्थ होंगे। उसे मारने को उद्यत राजा रुक कर उसकी प्रार्थना पर उसे रहने के लिए चार स्थान निर्धारित करता है।

1. जुआ घर
2. शराब एवं शराब घर
3. वेश्यालय
4. स्वर्ण

कलियुग उसी समय राजा के सिर पर रखे स्वर्ण के मुकुट में निवास कर लेता है क्योंकि वह मुकुट पापी जरासंध का था।

राजा घूमते-घूमते केशिकी नदी के तट पर महान तपस्वी शृंग ऋषि एवं उनके पिता शमीक ऋषि के आश्रम पर पहुंचते हैं। तेज धूप, थका शरीर, सूखे होठों पर अनन्त प्यास, मुख पर मृत्यु तुल्य वेदना एवं कलियुग प्रभाव से युक्त राजा शमीक ऋषि से पानी पिलाने की याचना करते हैं। परन्तु समाधिस्थ शमीक ऋषि नहीं सुन पाते राजा की करुण पुकार। राजा ने उन्हें घमण्डी जान कर अपमानित करने के उद्देश्य से एक मरा हुआ सर्प उनके गले में डाल दिया और चले गए।

श्रीमद्भागवत के प्रथम स्कन्द में इसका अति सजीव चित्रण किया गया हैः

अभूतपूर्वः सहसा क्षुत्तृड्भ्यामर्दितात्मनः।
ब्राह्मण प्रत्यभूद् ब्रह्मन् मत्सरो मन्युरेव च।।29।।
स तु ब्रह्म ऋषेरंसे गतासुमुरगं रूषा।
विनिर्गच्छन्धनुष्कोट्या निधाय पुरमागमत् ।।30।।

उस समय युवा शृंग ऋषि केशिकी नदी के तट पर साथियों सहित खेल रहा था। किसी बच्चे ने शृंग ऋषि को सर्प की घटना बताई तो शृंग ऋषि ने क्षत्रियों को बुरा-भला कहकर केशिकी का जल हाथ में लेकर उसी समय श्राप दिया कि उसके पिता के गले में सर्प डालने वाले राजा की मृत्यु सप्ताहान्त में तक्षक सर्प के काटने से होगी।

इति लांधितमर्यादं तक्षकः सत्तमेअहनि।
दंक्षयति स्म कुलाड्गांर चोदितो मे ततद्रुहम्।।

(प्रथम स्कन्द 37)

समाधि खुलने पर शमीक ऋषि को सब ज्ञान होता है। परीक्षित को श्राप के विषय में सूचना दी जाती है। परीक्षित मुक्ति हेतु शुक्रताल में भागवत कथा श्रवण करके मुक्त होते हैं। (श्रीमद्भागवत में विस्तृत कथा है)

यहां पर यह स्पष्ट करना प्रासंगिक होगा कि पौराणिक इतिहास में दो शृंग ऋषि होने का उल्लेख मिलता है। 1. ऋष्य शृंग (विभाडंक ऋषि के पुत्र) 2. शृंग ऋषि (शमीक ऋषि के पुत्र)। पौराणिक इतिहास से अनभिज्ञ अधिकांश लोग दोनों को एक समझते हैं तथा कहते हैं कि राजा दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ शृंग ऋषि ने ही सम्पन्न कराया था। जबकि यह गलत है। दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ ऋष्य शृंग ने कराया था और इनके साथ राजा दशरथ की बहिन शान्ता का विवाह हुआ था तथा राम के फूफा लगते थे। इस विषय में वाल्मिकी रामायण के बालकाण्ड सर्ग 3 का यह श्लोक 5 द्रष्टव्य है।

शान्ता भर्तारं माननीय ऋषि शृंग तपोधनम्।
अस्माभिस्सहिताः पुत्रकामेष्टि शीघ्रमाचर।।

हम जल की उपेक्षा करते रहे पर्यावरण प्रदूषित होता रहा और सूखने लगे जल स्रोत। सरस्वती जैसी अनेक पवित्र नदियों के साथ ही लुप्त हो गई यह पवित्र केशिकी - अथवा कौशिकी नदी। गवाही के लिए रह गया यह छोटा सा ताल। इस विलुप्त नदी के चिन्ह आज भी स्याना (बुलंदशहर) तक प्राप्त होते हैं। इस तालाब से कुछ ही दूरी पर खटकी ग्राम में विश्वामित्र ऋषि के आश्रम के चिन्ह के रूप में एक कदम्ब का वृक्ष अभी तक खड़ा है। इसी आश्रम से लगभग 6 किलोमीटर दूर इसी नदी के तट पर च्यवनप्राश के आविष्कारक महर्षि च्यवन ऋषि का आश्रम था जो आज चमनावल उर्फ महलवाला के नाम से जाना जाता है। खुदाई में यहां पर हवन-कुण्ड एवं हवन की राख के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

श्यामा ताल

श्यामा ताल एवं गोपेश्वर मन्दिर
श्याम कृष्ण तो श्यामा राधा।
एक गोपी तो दूसरा गोपेश्वर।
एक आह्लाद तो एक आह्लादिनी शक्ति।

एक के बिना दूसरा अर्थहीन, संयोग निश्चित है, चाहे ईश्वरीय हो अथवा मानवीय।

ऐसा ही संयोग है गोपेश्वर मन्दिर एवं श्यामा ताल का।

महाभारत के सभ्यता विनाशक विश्वयुद्ध को रोकने के अन्तिम प्रयास के रूप में भगवान कृष्ण दो महारथी एवं दस हजार सैनिकों सहित हस्तिनापुर के लिए जाते हुए हस्तिनापुर से दूर ब्राह्मण बाहुल्य ग्राम वृकस्थल के बाहरी भाग में रुक कर शिवलिंग की स्थापना एवं दुर्योधन से सन्धि वार्ता करते हैं। वार्ता विफल हो जाने के परिणाम स्वरूप विनाशक युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर राजा बनते हैं। स्थानीय जनता की मांग एवं अपनी इच्छा से सन्धिवार्ता के पवित्र स्थल (चूंकि वहां भगवान कृष्ण के चरण पड़ चुके थे) पर वे मन्दिर एवं ताल का निर्माण करा देते हैं। यह मन्दिर कृष्ण के एक नाम गोपेश्वर एवं ताल श्यामा (राधा का एक नाम) ताल के नाम से प्रसिद्ध हुआ। तहखाना अथवा गुफा होने के कारण अब यह मन्दिर गुफा के नाम से प्रसिद्ध है।

समयान्तराल पश्चात् परीक्षित ने परीक्षितगढ़ निर्माण के समय यहां से मिट्टी की आपूर्ति की जिसके परिणामस्वरूप एक विस्तृत कच्चा तालाब बन गया। श्यामा ताल इसी में विलीन हो गया। राजा परीक्षित इसे विस्तृत सुन्दर एवं पक्का तालाब बनाना चाहते थे परन्तु अकाल मृत्यु ने योजना पर पानी फेर

दिया। श्यामा ताल भी विस्मृत होकर स्यामा बनते-बनते स्याना जोहड़ हो गया। वर्तमान में स्याना जोहड़ भी नाममात्र का रह गया है। अब तो स्याना भी माननीय उच्च न्यायालय की ओर आशा-दृष्टि से देखता हुआ अन्तिम सांसें गिन रहा है।

गोपेश्वर से कुछ दूरी पर ही जहां सेना ने पड़ाव डाला था वहां कृष्ण के नाम पर कृष्ण पुरा या किशनपुरा ग्राम बस गया जो बाद में उजड़ गया। उसके कुछ निवासी खानपुर और कुछ परीक्षितगढ़ में जा बसे। उस जंगल को आज भी किशनपुरा या किशनपुरे का जंगल कहते हैं। वृकस्थल के ब्राह्मण भी परीक्षितगढ़ में आ बसे, उस स्थान को आज खेड़ी या खेड़ी का जंगल कहते हैं।

जरत्कारू ऋषि का तालाब

परीक्षितगढ़ स्थित अमृत कूप (या नवल देह का कुआं) के ठीक सामने है जरत्कारू ऋषि का यह कच्चा तालाब। यह एक मात्र ऐसा ज्ञात तालाब है जो कृष्ण जन्म की शुभ सूचना सुनकर गर्वोन्नत हुआ तो महाभारत के विनाशक युद्ध की विभीषिका पर कुण्ठित भी हुआ। इसने परीक्षित मरण देखा तो जन्मेजय के सर्प यज्ञ में स्वयं भाग भी लिया। आज यह समाप्ति की ओर है तो कभी इसने ऋषियों द्वारा वेदमंत्रों की स्वर लहरियां भी सुनी हैं। आज इसमें घास-फूस है तो कभी इसमें कमल भी खिला करते थे। किसका है यह तालाब? कौन थे जरत्कारू ऋषि?

महाभारत में आदि पर्व के अध्याय 12 से लेकर 59 तक जरत्कारू विषयक समस्त जानकारी उपलब्ध है। उसके अनुसार एक स्वस्थ एवं हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति ने ब्रह्मचारी रहते हुए तपस्या में स्वयं को सुखा लिया तो उनका नाम जरत्कारू प्रसिद्ध हुआ। महाभारत के आदि पर्व अध्याय 13 में इनके विषय में कहा है कि -

जरत्कारूरिति ख्यात ऊर्ध्वरेता महातपाः।
यायावराणां प्रवरो धर्मज्ञः संशितव्रतः।।

'उनका नाम था जरत्कारू। वे ऊर्ध्वरेता और महान ऋषि थे। यायावरों में (जनहित में घूमने वाले ब्राह्मणों के समूह विशेष का नाम) उनका स्थान सबसे ऊंचा था। वे धर्म के ज्ञाता थे'।

जरत्कारू का विवाह उनके प्रण के अनुसार उन्हीं के नाम वाली कन्या (जरत्कारू) से हुआ। यह नाग कन्या नाग राजा वासुकि की बहिन थी। इनके गर्भ से महान तपस्वी आस्तिक ऋषि का जन्म हुआ।

आस्तीको नाम पुत्रश्च तस्यां जज्ञे महामनाः।।

तक्षक नाग द्वारा शापवश परीक्षित की मृत्यु होती है। परीक्षित का पुत्र जन्मेजय बदला लेने के लिए 'सर्प सत्र' विधि से सर्प यज्ञ करता है। अनेक सर्प यज्ञाग्नि में स्वयं आकर जलने लगते हैं। सर्पो का विनाश होने लगता है। इस विषय में महाभारत जन्मेजय को कोई दोष नहीं देता। बल्कि कहता है कि आदेश न मानने के कारण कुछ सर्पो को उनकी माता कद्रु का शाप था कि वे जन्मेजय के यज्ञ में जलकर मरेंगे।

सर्पसत्रे वर्तमाने पावको वः प्रधक्ष्यति।
जन्मेजयस्य राजर्षेः पाण्डवेस्य धीमतः।।

'जाओ, पाण्डव वंशी बुद्धिमान राजर्षि जन्मेजय के सर्प यज्ञ का आरम्भ होने पर उसमें प्रज्वलित अग्नि तुम्हें जलाकर भस्म कर देगी'।